(छहढाला प्रवचन, पृष्ठ : 23 का शेष...)

क्षण में अनन्त पापों का नाश हो जाता है। इस दुःखमय संसार में धर्म की प्राप्ति जीव को अतिदुर्लभ है, किन्तु जिसको दुःख से छुटकारा पाना हो, उसको धर्म प्रगट करना ही एक उपाय है। धर्म के सिवाय दूसरा कोई भी दुःख से छुड़ानेवाला नहीं है। अतः हे बन्धु! तुम सर्वज्ञ के धर्म को ही शरणरूप समझकर परम भक्ति से इसकी आराधना करो। इस धर्म के सेवन से ही तुम्हारा दुःख मिटेगा और सुख होगा।

जो सर्वज्ञकथित धर्म को नहीं मानता और कुधर्म के सेवन को नहीं छोड़ता, वह जीव संसाररूपी घोर दुःख के समुद्र में से कैसे निकलेगा? जीव ने संसार के निष्प्रयोजन पदार्थों की परीक्षा तो की; परन्तु अपने हित-अहित का विवेक न किया। यदि सुदेव-सुगुरु-सुधर्म और कुदेव-कुगुरु-कुधर्म को परीक्षापूर्वक पहचाने तो सत्य की उपासना करके सम्यग्दर्शन प्राप्त करे और तब उसका दुःख मिटे।

भाई ! यह तेरी कथा है। नरकादि दुःखों से छूटने के लिए और मोक्षसुख पाने के लिए तुझे यह कथा सुनायी जाती है। असंख्य योजन विस्तारवाले जल के मधुर स्वादयुक्त स्वयंभूरमण समुद्र का सब जल पी लें तो भी तृषा नहीं मिटे, किन्तु पीने के लिए जल की एक बूँद भी उन्हें नहीं मिलती, असह्य तृषा से वे सदैव पीड़ित रहते हैं। चैतन्यरस के बिना जीव की तृषा कैसे मिट सकती है? जिसने अवसर मिलने पर चैतन्य के शांतरस का पान नहीं किया और उसके विपरीत क्रोधादि कषाय-अग्नि का सेवन किया ह्न ऐसा जीव बाह्य में भी तीव्र तृषा में जलता है।

मुनिराज तो चैतन्य के निर्विकल्प उपशमरस में ऐसे लीन होते हैं कि पानी पीने की वृत्ति भी नहीं रहती; आत्मशांति से तृप्ति हो जाती है। यहाँ तो कोई बीमार पड़ा हो, पानी माँगे और आने में जरा-सी देर हो जाये तो क्रोध से अन्धाधुंध होकर कहने लगता है कि 'अरे, सब कहाँ मर गये? कोई पानी क्यों नहीं लाता?' परन्तु भाई ! जरा-सा धैर्य रखना तो सीख। उस नरक में कौन था तुझे पानी पिलानेवाला? वहाँ तो पानी का नाम लेने पर भी तेरे मुँह में धधकता ताम्ररस डाला जाता था, जिससे मुँह भी जल जाता था। क्या उन सब दुःखों को तू भूल गया? जब थोड़ी-सी प्रतिकूलता तुझसे सहन नहीं होती, तब फिर देहबुद्धि को तू कैसे छोड़ेगा ? और देहबुद्धि को छोड़े बिना तेरा दुःख कैसे मिटेगा ? अनंत दुःख तूने देहबुद्धि के कारण ही भोगे हैं; अतः अब देह से भिन्न आत्मा की पहचान कर ! **(क्रमशः)**

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 26 293 अंक : 5

आतम अनुभव आवै...

आतम अनुभव आवै जब निज, आतम अनुभव आवै।
और कछू न सुहावे जब निज, आतम अनुभव आवै।।टेक।।
जिनआज्ञाअनुसार प्रथम ही, तत्त्व प्रतीति अनावै।
वरनादिक रागादिकतैं निज, चिन्ह-भिन्न फिर ध्यावै।।1।।
मतिज्ञान फरसादि विषय तजि, आतम सम्मुख धावै।
नय प्रमान निक्षेप सकल श्रुत, ज्ञानविकल्प नसावै।।2।।
चिदऽहं शुद्धोऽहं इत्यादिक, आपमांहि बुध आवै।
तन पै वज्रपात गिरतैं हू, नेकु न चित्त डुलावै।।3।।
स्वसंवेद आनंद बढ़ै अति, वचन कह्यो नहिं जावै।
देखन जानन चरन तीन विच इक स्वरूप लखावे।।4।।
चित कर्ता चित कर्म भाव चित, परनति क्रिया कहावै।
साधक साध्य ध्यान ध्येयादिक, भेद कछू न दिखावै।।5।।
आत्मप्रदेश अदृष्ट तदपि, रसस्वाद प्रगट दरसावै।
ज्यों मिश्री दीसत न अंध को, सपरस मिष्ट चखावै।।6।।
जिन जीवन के, संसृत पारावार पार निकटावै।
'भागचन्द' ते सार अमोलक परम रतन वर पावै।।7।।

योगी तो निर्जरा ही करता है

पूज्यपाद आचार्य श्री देवनन्दिस्वामी के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के 44 वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है ह्न

अगच्छंस्तद्विशेषाणामनभिज्ञश्च जायते।
अज्ञाततद्विशेषस्तु बद्ध्येते न विमुच्यते ।।44।।

शरीरादि बाह्य पदार्थों से अनभिज्ञ रहता हुआ योगी अपने आत्मस्वरूप में ही स्थिर होता है। इस कारण वह बंध के कारणरूप राग-द्वेष के अभाव में कर्मों से न बंधता हुआ निर्जरा ही करता है।

(गतांक से आगे ...)

जो मतिमान हैं, बुद्धिमान हैं; वे परद्रव्य और स्वयं के भी विशेष का लक्ष्य नहीं करते हुए सामान्य का लक्ष्य करते हैं। उससे ही उसका हित होता है। सामान्य का लक्ष्य करनेवाले का क्षयोपशम भले थोड़ा ही हो तो भी उसका हित होता है तथा क्षयोपशम विशेष हो, दुनिया को समझा सकता हो; पर सामान्य का आश्रय न हो तो हित नहीं होता। दुनिया समझे तो उसका लाभ दुनिया को होता है, पर समझानेवाले को उससे लाभ नहीं होता। समझानेवाले को समझाने का विकल्प होने से शुभबंध ही होता है; और यदि उसमें लाभ माने तो दृष्टि भी मिथ्या होती है।

भाई ! ये ऐसी बात है जो तेरे ख्याल में बैठे। एक बार तो इसको अन्तर से स्वीकार कर ! कि स्वभाव की समीपता से ही लाभ होता है। पर्याय की समीपता या शुभ विकल्प से या दूसरे जीव समझें इस विकल्प से लाभ नहीं होता।

यदि कोई पूछे मंदिर आदि क्यों बनाते हैं ? उससे कहते हैं भाई ! जो कार्य होने हों, वे सब कार्य स्वकाल में होते हैं, उसमें जीवों का शुभभाव निमित्त होता है; किन्तु उससे लाभ नहीं होता और ऐसे भाव आये बिना भी नहीं रहते। इसी का नाम व्यवहार है। जब तक पूर्ण वीतरागी न हों, तब तक ऐसे शुभभाव का व्यवहार आये बिना नहीं रहता ; पर मुक्ति का मार्ग तो एक ही है ह्न '**स्वात्मनिष्ठता**' स्वरूप में लीनता होने से ही कर्मों से छूटकर मुक्ति होती है।

अब 45 वीं गाथा में मुनिराज विशेष कहते हैं कि पर तो पर ही है, उसके लक्ष्य से दु:ख होता है तथा आत्मा, आत्मा ही है, उसके लक्ष्य से सुख होता है। इसलिये सर्व महात्माओं ने आत्मा के लिये ही उद्यम किया है।

पर: परस्ततो दु:खमात्मैवात्मा तत: सुखम्।
अत एव महात्मानस्तन्निमित्तं कृतोद्यमा: ।।45।।

शुद्ध चैतन्य ज्ञानानंद मूर्ति आत्मा स्व है और शरीर, वाणी, मन, कर्म, स्त्री, पुत्र, धन, देव-शास्त्र-गुरु आदि सभी आत्मा से पर हैं। पुण्य-पाप परिणाम भी पर हैं।

क्या देव-शास्त्र-गुरु भी पर हैं ? जहाँ परिणाम भी पर कहा तो पुण्य के निमित्त देव-शास्त्र-गुरु तो पर ही हुए ना।

पर तो पर ही है; परंतु उसे अपना मानने से जीव को दु:ख होता है। पर कभी अपनेरूप नहीं होता और स्वयं कभी पररूप नहीं होता; फिर भी पर को अपना मानने से ही जीव को आकुलता होती है, वही दु:ख है। दु:ख तो जीव की स्वयं की मिथ्यामान्यता से होता है; लेकिन उसमें निमित्त परद्रव्य-परभाव होते हैं।

मैं आत्मा ज्ञानानंद स्वरूप हूँ ह्न ऐसी दृष्टि करते हुए आत्मा में से आनन्द प्रकट होता है और पर की तरफ दृष्टि करने से आकुलता-दु:ख उत्पन्न होता है। आत्मा में ठहरने से ही सुख और आनंद प्रकट होते हैं ह्न ऐसा जानने के कारण महात्मा ज्ञानी पुरुष आत्मा का ही उद्यम करते हैं।

जितना परद्रव्य का आश्रयभाव है, उतना दु:खरूप है और जितना स्वभाव का आश्रयभाव है, उतना सुख है। स्वभाव के आश्रय से प्रकट होनेवाले शुद्धभाव सम्यग्दर्शनादि शांतिरूप-सुखरूप भाव हैं और पर के आश्रय से होनेवाले मिथ्यात्व आदि भाव दु:खरूप हैं; अत: जिसे स्व आत्मा का हित करना हो, उसे स्व आत्मस्वभाव के सिवाय सर्व विकल्पों से मुडकर, सभी परपदार्थों का लक्ष्य छोड़ना पड़ेगा; क्योंकि उसके लक्ष्य से दु:ख उत्पन्न होता है और स्वभाव के लक्ष्य से सुख उत्पन्न होता है।

यहाँ तो भाई वीतरागता की बात है। कोई बाड़े या संप्रदाय की बात नहीं है, व्यक्ति पूजा भी नहीं है, सत्य जैसा है, वैसा कहा है।

कितने ही अन्यमती मानते हैं कि काशी में करोंत दिलाने से एकावतारी होता है। वैसे ही यहाँ भी कई ऐसा मानते हैं कि सिद्धगिरी में जिसका मरण हो, उसका मोक्ष होगा। पर मूढ ! ऐसे कभी मोक्ष नहीं होता ? यहाँ तो कहते हैं कि **(शेष पृष्ठ : 30 पर ..)**

परमाणु के प्रकार

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की 21 से 24 वीं गाथा की टीका में समागत 38 वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। श्लोक मूलत: इसप्रकार है ह्न

(मालिनी)

इति विविधविकल्पे पुद्गले दृश्यमाने
न च कुरु रतिभावं भव्य शार्दूल तस्मिन्।
कुरु रतिमतुलां त्वं चिच्चमत्कारमात्रे
भवसि हि परमश्रीकामिनी कामरूप: ।।38।।

इसप्रकार विविध भेदोंवाला पुद्गल दिखाई देने से, हे भव्यशार्दूल ! भव्योत्तम ! तू उसमें रतिभाव न कर ! चैतन्यचमत्कारमात्र आत्मा में तू अतुल रति कर, जिससे तू परमश्रीरूपी कामिनी का वल्लभ होगा।

(गतांक से आगे)

अब इस श्लोक के माध्यम से विविध प्रकार के पुद्गलों में रति नहीं करते हुए चैतन्य-चमत्कार में रति करने के लिये कहते हैं।

जिसप्रकार वन का सिंह अकेला ही हिरण आदि जानवरों को मार डालता है; उसीप्रकार भव्यशार्दूल भी विकार को तोड़-फोड़ डालता है। जिसप्रकार मवेशियों के समूह में ताकतवर मवेशी पर सिंह सबसे पहले पंजा मारता है; उसीप्रकार भव्योत्तम आत्मा सबसे पहले मोह पर छापा मारता है और उसका नाश करता है तथा मुक्तिरूपी स्त्री का नाथ होता है। वह स्त्री उसे बाद में कभी भी नहीं छोडती अर्थात् उस शुद्ध परिणति का कभी विरह नहीं होता।

यह अजीव अधिकार है। जिसे धर्म करना हो, उसे जीवद्रव्य से भिन्न ऐसे अजीवद्रव्य का ज्ञान करना चाहिए। जीव का विपरीत अजीव और अजीव का विपरीत जीव है। अजीव की पहचान कराते हुए आचार्यदेव कहते हैं कि तू तो जीव है; अत: अजीव की रुचि छोड़कर अंतर चैतन्य की रुचि कर !

शरीर के रजकण स्वतंत्र हैं, उसे न मानता हुआ अज्ञानी आत्मा के कारण शरीर की स्थिति मानता है, इसलिए निश्चय से वह अजीव को नहीं मानता। अजीव को यथार्थ मानना भी तभी कहा जाए, जब ऐसा माने कि वह मुझसे नहीं और मैं उससे नहीं; क्योंकि शरीर, कर्म आदि अजीव का आत्मा में अभाव है। आत्मा तो चैतन्यमूर्ति है, वह शरीरादि से भिन्न है। इसप्रकार आत्मा को जाने बिना अजीव भी जानने में नहीं आता। शरीर, कुटुंब आदि अजीव हैं। उनका आधार आत्मा नहीं परमाणु हैं। अब उस परमाणु की व्याख्या करते हैं :ह्न

धाउचउक्कस्स पुणो जं हेऊ कारणं ति तं णेयो।
खंधाणं अवसाणं णादव्वो कज्जपरमाणु ।।25।।

पृथ्वी, जल, तेज और वायु ह्न इन 4 धातुओं के हेतु को कारणपरमाणु जानना। स्कन्धों के अवसान अर्थात् छूटे हुए अविभागी अंतिम अंश को कार्यपरमाणु जानना।

यहाँ परमाणु की व्याख्या करते हुये उन्हें दो रूपों में देखते हैं ह्न कारणपरमाणु और कार्यपरमाणु। जड़ का कार्य परमाणु के कारण होता है; आत्मा के कारण नहीं। परमाणु स्कंध का कारण है, यह भी उपचार है। निश्चय से तो प्रत्येक परमाणु स्वयं का कार्य करता है। भाषावर्गणा, शरीर, कर्म आदि का कारण परमाणु ही है, इन सबका कारण होने से वह कारणपरमाणु है। यहाँ अन्यमत में निरूपित पृथ्वी, जल, तेज व वायु - इन चार धातुओं का निराकरण किया है कि इनका कारण तो परमाणु है तथा आकाश अरूपी है, वह परमाणु नहीं है।

देखो, पुद्गल के पिंड होने के कारणरूप परमाणु को कारणपरमाणु कहा है तथा पिंड में से छूटे हुए परमाणु को कार्यपरमाणु कहा गया है।

यह कारणपरमाणुद्रव्य और कार्यपरमाणुद्रव्य के स्वरूप का कथन है। अब परमाणु की चार भेद से पहचान कराते हैं :ह्न

(1) पृथ्वी, जल, तेज, वायु - इन 4 धातुओं का हेतु कारणपरमाणु है ह्न

पृथ्वी आदि चार धातु परमाणु से टिकी हुई हैं। वे चारों आत्मा से भिन्न हैं; अत: आत्मा से नहीं टिकी हुई हैं। जिसके कारण स्कंध होते हैं, उस परमाणु को यहाँ कारणपरमाणु कहा है।

(2) एक गुण स्निग्धता या रूक्षतावाला परमाणु जघन्य परमाणु है ह्न

वह परमाणु ही एक गुण स्निग्ध या रूक्ष होते हुए सम या विषम बंध के लिये

अयोग्य जघन्यपरमाणु है - ऐसा अर्थ है। एक गुण स्निग्धत्व या रूक्षत्व वाला मूर्त परमाणु भी जब बंध के योग्य नहीं है तो फिर आत्मा बंध के योग्य हो - ऐसा कैसे हो सकता है ? आत्मा कर्म का बंध नहीं करता, उसकी एक समय की पर्याय में भावबंध होता है; पर वह आत्मा का स्वभाव नहीं है।

(3) एक गुण से अधिक स्निग्धत्व या रूक्षत्व वाला परमाणु बंध के योग्य है, वह उत्कृष्ट परमाणु है ह्न

एक गुण स्निग्धता या रूक्षता के ऊपर दो गुणवाले का और चार गुणवाले का समबंध होता है तथा तीन गुणवाले का और पाँच गुणवाले का विषमबंध होता है - वह ही उत्कृष्ट परमाणु है। समबंध अर्थात् एकी गुणवाले परमाणुओं का बंध तथा विषमबंध अर्थात् बेकी गुणवाले परमाणुओं का बंध। यहाँ टीका में समबंध और विषमबंध का एक-एक उदाहरण दिया है, तदनुसार सभी समबंध और विषमबंध समझ लेना। इस बंध की जड़ को खबर नहीं है; पर आत्मा इसका ज्ञान करे तो सूक्ष्मबुद्धि हुए बिना नहीं रहता।

(4) स्कंध खंडित होते-होते जो छोटे से छोटा अविभाग अंश रहता है, वह कार्य परमाणु है ह्न

गलते हुए अर्थात् छूटते हुए पुद्गल द्रव्यों के अवसान में-अंतिमदशा में स्थित कार्यपरमाणु है। पत्थर का चूरा होते-होते अंतिम भाग रहता है, वह स्कंध का अंश है। उसे कार्यपरमाणु कहा जाता है। पहाड़ियाँ टूटती हैं तो इसके कारण से भी उसका अंतिम भाग रहता है, वह कार्यपरमाणु है। इसप्रकार अणुओं के चारों भेद अतीन्द्रिय हैं, उन्हें अतीन्द्रिय ज्ञान जानता है। जब परमाणु ही इन्द्रियों द्वारा नहीं जाना जाता तो आत्मा तो अरूपी है, वह इन्द्रियों से कैसे जाना जा सकता है ?

1.कार्य 2.कारण 3.जघन्य 4.उत्कृष्ट ह्न यह चार भेद परमाणु के हैं। वह परमाणु द्रव्यस्वरूप में स्थित होने से उसे विभाव का अभाव है; अत: वह उसका परमस्वभाव है। यहाँ तो जड़ को भी परमस्वभावी कहा है तो उसे जानने-देखनेवाला आत्मा तो परमस्वभावी है ही। वैसे तो चैतन्यस्वभावी आत्मा अकेला ज्ञानमय है, परमस्वभावी है; किन्तु यहाँ परमाणु को भी एक प्रकार से परमस्वभावी कहा है। इनमें अपने ज्ञानमूर्ति परमस्वभाव को पहचान कर श्रद्धा-ज्ञान व रमणता करना धर्म है।

(शेष पृष्ठ : 27 पर ...)

छहढाला प्रवचन

नारकियों के दुःखों का विशेष कथन

तिल-तिल करें देह के खंड असुर भिड़ावें दुष्ट प्रचण्ड।
सिंधुनीर तें प्यास न जाय, तो पण एक न बूँद लहाय ।।११।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान दौलतरामजीकृत छहढाला पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

सेमरवृक्ष के पत्तों के समशेर जैसे प्रहारों से नारकियों के शरीर छिद जाते हैं; तदुपरान्त नारकी जीव परस्पर लड़ते हुए एक-दूसरे को खंड-खंड कर डालते हैं। उनका शरीर वैक्रियिक होता है, जिससे उसके लाखों टुकड़े हो जाने पर भी वह फिर इकट्ठा हो जाता है। उसको इतनी तीव्र प्यास लगती है कि वह पूरे समुद्र का जल पीना चाहता है; परन्तु पीने के लिए उसे पानी की एक बूँद भी नहीं मिलती। इतना ही नहीं, अपितु परम अधर्मी असुर उसका गला फाड़ कर उसमें ताँबे का धधकता रस डालते हैं। दुष्ट परिणामवाले असुर देव कौतूहल के लिए वहाँ जाकर नारकियों को आपस में एक-दूसरे से भिड़ाते हैं, पूर्व का बैर याद कराके उन्हें आपस में लड़ाते हैं।

नारकी जीव भी क्रूरपरिणामी होने से कुत्ते की तरह एक-दूसरे से लड़ते ही रहते हैं। नारकियों में स्त्री-पुरुष नहीं होते, सभी नपुंसक ही होते हैं। काम-क्रोधादि से वे सदैव अत्यन्त संतप्त रहा करते हैं, उन्हें असाता का भी तीव्र उदय होता है; सभी तरह से वे दुःखी ही दुःखी हैं। करोड़ों, अरबों या असंख्य वर्षों की आयु तक उन्हें न तो पानी की बूँद पीने को मिलती है और न अनाज का कण खाने को मिलता है। नारकी जीवों को कुअवधिज्ञान भी संक्लेश का ही कारण बनता है। वहाँ के सम्यग्दृष्टि जीवों को सुअवधिज्ञान होता है।

क्षणभर के लिए भी जहाँ सुख नहीं, साता नहीं ह्न ऐसे नरक के दुःख जीव ने धर्म के बिना अनंतबार भोगे। अरे ! जीव स्वयं ज्ञान व सुख का सागर है, परन्तु वह स्वयं अपने को भूलकर अज्ञान से दुःख के सागर में डूब रहा है। नारकी जीव तीव्र दुःख की वेदना से चीखता-पुकारता है; परन्तु कौन सुने उसकी पुकार? वहाँ उसकी पुकार सुननेवाला कोई नहीं। असुरदेव उसके पापों की याद दिलाकर उसे कहते हैं कि ह्न तुझे

मनुष्य पर्याय में मांस बहुत भाता था न ! तो ले, यह पी ! ऐसा कहकर संडासे से उसका मुँह खोलकर उसमें सीसे का उबलता रस डालते हैं व महान दुःख देते हैं। पूर्व में तूने दूसरों को काटा था ह्न ऐसा कहकर उसके शरीर को करोंत से चीरते हैं। नरक के दुःख कहाँ तक कहें ? ऐसे-ऐसे दुःखों के सागर में रहने के काल में भी आत्मा के भीतर सुख का सागर भरा पड़ा है। वहाँ कोई जीव नरक की घोर दुःखवेदना से त्रस्त होकर ऐसा विचार करते हैं कि अरे ! यह कैसा दुःख? यह आत्मा का स्वरूप नहीं हो सकता; इस दुःख से बचने का कोई स्थान जरूर होना चाहिए। इसप्रकार से विचार करते हुए अन्तर की गहराई में जाकर, शान्ति के धाम अपने चैतन्यस्वरूप को लक्ष्य में ले लेते हैं और सम्यग्दर्शन प्राप्त करते हैं।

प्रश्न : क्या नरक में भी सम्यग्दर्शन हो सकता है?

उत्तर : हाँ भाई ! वहाँ भी तो आत्मा है न? आत्मा अपने स्वभाव में अन्तर्मुख होकर वहाँ भी सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है; जब नरक में भी सम्यग्दर्शन पाकर वह जीव दुःख के खारे समुद्र के बीच में शांति का मीठा झरना प्राप्त कर लेता है तो भाई ! तुम तो मनुष्य हो। यहाँ तो तुम्हें नरक की प्रतिकूलता का लाखवाँ भाग भी नहीं है। अतः प्रतिकूलता का बहाना छोड़कर इस अवसर में धर्म प्राप्ति का उद्यम करो; क्योंकि धर्म को भूलकर कुदेव-कुगुरु-कुधर्म का सेवन करने से या सच्चे देव-गुरु-धर्म की अविनय करने से जीव नरकादि के घोर दुःख-समुद्र में गिरता है। जीव का उद्धार करनेवाला तो एक मात्र वीतराग धर्म ही है; अतः ऐसे धर्म का सेवन कर, वीतराग-विज्ञान प्रगट करो।

भाई ! तुमने अज्ञान से पाप तो अनंतबार किया और उसका बुरा फल भी अनन्तबार भोगा; परन्तु अब तो तुम अपने चैतन्यगुण को पहचान कर आनन्द रस को चखो। अब तक तो मिथ्यात्व के जहर का स्वाद लिया, अब चैतन्य के अमृतरस का स्वाद लो। अपने अनन्त सुखस्वभाव को भूलकर अनन्तानुबंधी मिथ्यात्वादि भावों के सेवन से नरक में गया। अतः अनन्त स्वभाव के अनादर का फल अनन्त दुःख है और अनन्तसुख से भरपूर स्वभाव के आदर का फल अनंत सुख है। इसमें किसी की कोई सिफारिश नहीं चलती, जिससे जीव को अपने किये हुए पापों का फल न भोगना पड़े।

हाँ, धर्म के सेवन से पाप का नाश जरूर हो जाता है। सम्यक्त्व के सेवन से एक

(शेष पृष्ठ : 4 पर....)

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : यदि बाह्यवस्तु बंध का कारण नहीं है,तो शास्त्रों में बाह्यवस्तु के त्याग करने का उपदेश क्यों दिया ?

उत्तर : बाह्यवस्तु बंध का कारण है ही नहीं; क्योंकि वह बाह्यवस्तु अपनी आत्मा के द्रव्य-गुण में तो है नहीं और पर्याय में भी उसका अभाव है; अत: वह बंध का कारण नहीं है। हाँ, इतना अवश्य है कि बंध का कारण जो अध्यवसान है, वह बाह्यवस्तु के आश्रय से ही होता है, उसके आश्रय बिना नहीं होता; इसलिये बंध का कारण मानकर बाह्यवस्तु के भी त्याग का उपदेश जिनवाणी में किया गया है।

प्रश्न : संसार की थकावट लाने का उपाय क्या है ?

उत्तर : संसार में जितने भी शुभाशुभ भाव हैं, वे सब दु:खरूप हैं। उनके फल में चतुर्गति मिलती है । वहाँ अनेकप्रकार के दु:ख और आकुलतायें हैं ह्न ऐसा अपने को अन्दर से लगना चाहिए। शुभाशुभ भाव दु:खरूप ही हैं ह्न ऐसा लगे तो संसार की थकावट लगे।

प्रश्न : क्या धर्म करने से शरीर का रोग नहीं मिटता ?

उत्तर : अरे भाई ! शरीर का रोग मिटाना धर्म का कार्य नहीं है, पूर्व का पुण्य पल्ले हो तो शरीर निरोगी होता है। धर्म के फल से शरीर का रोग मिटता है ह्न ऐसा माननेवाला धर्म के स्वरूप को समझा ही नहीं है। पुण्य शुभपरिणाम से होता है और धर्म शुद्धस्वभाव के आश्रय से प्रगट होता है, इसका उसे विवेक नहीं है। सनतकुमार चक्रवर्ती को दीक्षा लेने के बाद महान धर्मात्मा होने पर भी अनेक वर्षों तक शरीर में रोग रहा और शरीर पर धर्म का कोई असर नहीं हुआ। धर्म से शरीर निरोगी रहे ह्न ऐसा नहीं है। धर्म के फल में तो आत्मा में अपूर्व आनन्द का अनुभव प्रगट होता है। धर्म के साथ पुण्य और शरीरादि का सम्बन्ध ही नहीं होता। मोक्षमार्ग में पुण्य का भी निषेध है। शुभभाव करते-करते धर्म होगा ह्न यह मान्यता ही भूलभरी है।

प्रश्न : यदि राग का भी आदर कर लिया जाये तो क्या हानि है ? आगम में राग के आदर का इतना निषेध क्यों ?

उत्तर : राग का जहाँ आदर है, वहाँ वीतरागस्वभाव का अनादर है और जहाँ वीतरागस्वभाव का अनादर है, वहाँ उस वीतरागता को प्राप्त सर्वज्ञ का, सर्वज्ञता के साधक साधुओं का तथा उसके प्रतिपादन करनेवाले शास्त्रों का भी अनादर है। वीतरागी देव-गुरु-शास्त्र की आज्ञा तो वीतरागभाव की ही पोषक है, उसके बदले जिसने अपने अभिप्राय में राग का पोषण किया, उसने वास्तव में वीतरागी की आज्ञा का उल्लंघन किया है। बाहर से भले ही वीतरागी की भक्ति-पूजा-बहुमान का शुभभाव करता हो; परन्तु अन्तर में वीतरागी स्वरूप के अज्ञानपने के कारण वह अपने अभिप्राय में तो राग का ही सेवन और राग की ही भक्ति-पूजा-बहुमान कर रहा है। अज्ञानी का यह विपरीत अभिप्राय ही वीतराग की महान विराधना करके अमाप पाप का बंध करता है, इसका विचार जगत के जीवों को नहीं है।

प्रश्न : पुण्य प्राप्त हो ऐसा कौनसा धन्धा है ?

उत्तर : सच्चे जैन शास्त्रों का वाँचन, विचार, श्रवण करे तो पुण्य बंध हो और यदि उसमें सच्ची समझ करे तो 84 के भ्रमण से छुटकारा मिल जाये।

(नियमसार प्रवचन, पृष्ठ : 23 का शेष...)

इसीप्रकार से श्रीमद् कुन्दकुन्दाचार्यदेव प्रणीत प्रवचनसार गाथा 165-166 में कहा है कि स्निग्ध परिणामरूप परमाणु हों, या रूक्ष हों, सम अंशवाले हों या विषम अंश वाले हों ह्न जो दो अधिक अंशवाले हों, वे ही बंधते हैं, जघन्य अंशवाले नहीं बंधते। श्वेताम्बर आम्नाय में कहते हैं कि एक परमाणु 25 अंशवाला हो और दूसरा 50 अंशवाला हो तो भी बंध होता है; पर यहाँ तो कहते हैं कि दो अंश अधिक हों तो ही बंध होता है; अन्यथा नहीं होता। स्निग्धपने दो अंशवाला परमाणु चार अंशवाले स्निग्ध अथवा रूक्ष परमाणु के साथ बंध जाता है। अथवा रूक्षपने तीन अंशवाला परमाणु पाँच अंशवाले किसी भी परमाणु के साथ जुड़कर बंधता है। इसप्रकार परमाणु स्वतंत्रपने बंधते हैं तथा बिछुड़ते हैं। तू किसका क्या करेगा ? अर्थात् किसी का कुछ नहीं कर सकता। इसप्रकार यहाँ इस गाथा की चर्चा पूर्ण हुई। ●

समाचार दर्शन ह

दसवाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

*** शिविर में प्रतिदिन 17 घण्टे अविरल ज्ञान-गंगा प्रवाहित। * प्रवचन/कक्षाओं के माध्यम से 38 विद्वानों का लाभ मिला। * देश-विदेश से पधारे 815 आत्मार्थियों ने जिनवाणी का रसास्वादन किया। * वीतराग-विज्ञान एवं जैनपथप्रदर्शक के अनेक सदस्य बनें। * अनेक नवीन पुस्तकों का विमोचन। * लगभग 25,000/- रुपयों का सत्साहित्य एवं 2543 घंटों के सी. डी. व ऑडियो कैसिट्स घर-घर पहुँचे।**

जयपुर (राज.) : पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट द्वारा प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 17 से 26 अक्टूबर, 07 तक दसवें आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया। शिविर का उद्घाटन बुधवार, 17 अक्टूबर को प्रात:8.00 बजे श्री अजितभाई जैन (डायरेक्टर-धारीवाल इंडस्ट्रीज, बड़ौदा) के करकमलों से हुआ।

इस प्रसंग पर आयोजित सभा की अध्यक्षता श्री निहालचंदजी जयपुर ने की। मुख्य अतिथि के रूप में श्री सुरेशजी पाटनी कोलकाता एवं विशिष्ट अतिथियों के रूप में श्री अभयकरणजी सेठिया सरदारशहर,श्री राजकुमारजी काला जयपुर, श्री महेन्द्रजी पाटनी जयपुर, श्री अजितजी तोतूका जयपुर, श्री दिलीपभाई मुम्बई, डॉ. पी.सी. जैन जयपुर, श्री प्रेमचन्दजी बजाज कोटा मंचासीन थे।

सभा के पूर्व ध्वजारोहण श्री संदीपजी शाह लंदन व प्रवचन मण्डप का उद्घाटन श्रीमती मीनादेवी भागचंदजी कालिका उदयपुर के करकमलों से किया गया।

इस अवसर पर पण्डित पूनमचंदजी छाबड़ा द्वारा ट्रस्ट का परिचय दिया गया। अन्य विशिष्ट अतिथियों के उद्बोधन के उपरान्त डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने अपने मार्मिक उद्बोधन में वर्तमान समय में शिविरों की उपयोगिता एवं आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट की स्थापना से लेकर आज तक चल रही गतिविधियों का उद्देश्य एकमात्र तत्त्वप्रचार ही बताया। साथ ही ट्रस्ट के संस्थापक अध्यक्ष स्व. श्री पूरणचंदजी गोदीका के समर्पण एवं तत्त्वप्रचार की भावना का स्मरण दिलाते हुए संस्था की रीति-नीति से जन सामान्य को अवगत कराया तथा अंत में यही भावना व्यक्त की कि गुरुदेवश्री द्वारा प्रसारित यह तत्त्वज्ञान अनेक माध्यमों से घर-घर पहुँचे।

सभा का संचालन व आभार प्रदर्शन पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील ने किया तथा मंगलाचरण कुमारी परिणति पाटील ने किया।

शिविर में प्रतिदिन आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के सी.डी. प्रवचनों के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ.हुकमचंदजी भारिल्ल के समयसार ग्रंथ की

सातवीं गाथा से लेकर दसवीं गाथा तक मार्मिक प्रवचन हुए। आपके प्रवचन से पूर्व प्रतिदिन भिन्न-भिन्न विद्यार्थियों के प्रवचनों का लाभ मिला।

रात्रि में द्वितीय प्रवचन के रूप में पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित पूनमचंदजी छाबड़ा जयपुर, पण्डित वीरेन्द्रजी आगरा एवं पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली के प्रवचनों का लाभ मिला। रात्रिकालीन प्रथम प्रवचन से पूर्व पण्डित शांतिकुमारजी पाटील, डॉ. नरेन्द्रजी जैन, पण्डित सुदर्शनजी बीना, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री एवं पण्डित प्रवीणजी शास्त्री के सुश्राव्य प्रवचनों का लाभ मिला।

प्रतिदिन शिक्षण कक्षाओं में पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा एवं पण्डित मनीषकुमारजी शास्त्री रहली के अतिरिक्त पण्डित स्वानुभवजी शास्त्री मुम्बई द्वारा अंग्रेजी भाषा में विशेष कक्षाओं का आयोजन किया गया। बालकक्षायें डॉ. शुद्धात्मप्रभाजी टड़ैया मुम्बई के निर्देशन में लगाई गई ।

प्रात: 5.30 बजे की प्रौढ़ कक्षा में पण्डित पूनमचंदजी छाबड़ा, पण्डित कमलचंदजी जैन पिड़ावा, पण्डित सुदर्शनजी जैन बीना एवं डॉ.दीपकजी जैन जयपुर का लाभ मिला।

दोपहर की व्याख्यानमाला में डॉ.श्रीयांसजी सिंघई, श्रीमती शुद्धात्मप्रभाजी टड़ैया, पण्डित रमेशचंदजी जैन लवाण, पण्डित रमेशचंदजी शास्त्री, पण्डित पीयूषजी शास्त्री, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री, पण्डित वी.धनकुमारजी शास्त्री, पण्डित संजयजी सेठी, पण्डित विरागजी शास्त्री एवं पण्डित आदित्यजी शास्त्री के विविध विषयों पर प्रवचनों का लाभ मिला।

दोपहर की व्याख्यानमाला से पूर्व प्रतिदिन बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' एवं डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के सी. डी. प्रवचनों का प्रसारण किया जाता था।

शिविर में आयोजित श्री चौंसठ ऋद्धि विधान के आयोजनकर्त्ता स्व. श्री राजमलजी पाटनी की स्मृति में उनकी धर्मपत्नी रतनदेवी एवं सुपुत्र श्री अशोक पाटनी कोलकाता थे।

दिनांक 23 अक्टूबर को श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों में से प्रत्येक कक्षा में से चुने गये दो-दो विद्यार्थियों को आदर्श छात्र के रूप में सम्मानित किया गया।

25 अक्टूबर को रात्रि में समापन समारोह के अवसर पर पण्डित पूनमचंदजी छाबड़ा ने शिविर की आर्थिक रिपोर्ट एवं पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री ने व्यवस्थागत रिपोर्ट प्रस्तुत की। संचालन पण्डित शांतिकुमारजी पाटील ने किया। शिविर में कुल लगभग 815 साधर्मियों ने धर्मलाभ लिया। शिविर में लगभग 25000/- रुपयों का सत्साहित्य तथा 2543 घंटों के सी. डी. व ऑडियो कैसिट्स बिके। वीतराग-विज्ञान एवं जैनपथ प्रदर्शक के अनेक सदस्य बनें। ●

टोडरमल स्मारक की वेबसाइट लाँच

जयपुर : यहाँ शिक्षण-शिविर के मध्य दिनांक 21 अक्टूबर,07 रविवार को रात्रि में पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट ने इन्टरनेट पर अपनी नवनिर्मित वेबसाइट www.jain todarmalsmarak.com को लाँच किया। श्री संदीपजी शाह लंदन एवं श्री दिलीपजी शाह मुम्बई ने अपने करकमलों से इस वेबसाइट का उद्घाटन कर शिविरार्थियों के सामने इसका प्रदर्शन किया। इस अवसर पर पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल मुम्बई ने लोगों को इन्टरनेट व वेबसाइट के सम्बन्ध में सामान्य जानकारी प्रदान की तथा कु. मुक्ति जैन ने www.jain todarmalsmarak.com का संक्षिप्त परिचय दिया। ज्ञातव्य है कि आपने ही अथक् परिश्रम करके श्री समकित शाह मुम्बई के सहयोग से इस वेबसाइट का निर्माण किया है।

अंत में डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने अपने मार्मिक उद्बोधन में कहा कि हमें टी.वी एवं इंटरनेट जैसी चीजों का निषेध न करके यह सोचना चाहिये कि इनका उपयोग तत्त्वप्रचार के लिये कैसे किया जा सकता है ? वर्तमान में युवाओं में बहती हुई धारा को बदलना संभव नहीं है। अत: आधुनिक सुविधाओं एवं संचार माध्यमों का निषेध नहीं; दिशा बदलकर हम और अधिक तत्त्वप्रचार कर सकते हैं; अत: गंगा को बंगाल की खाड़ी से हिमालय पर ले जाने का प्रयास न करें।

(इष्टोपदेश प्रवचन, पृष्ठ : 20 का शेष...)

जिसमें से सिद्धपर्याय प्रगट होती है ह्न ऐसा भगवान आत्मा ही सिद्धगिरी-सिद्धालय है। उसके समीप जानेवाले की सिद्धि होती है। बाकी 99 बार शत्रुंजय की यात्रा से मोक्ष मानें, सो सब मूढ़तायें है। यात्रा कर-करके मर जाए तो भी मोक्ष नहीं होता और भगवान आत्मा का एकबार भी आश्रय ले तो जन्म-मरण शेष नहीं रहते, उसका मोक्ष होता है।

देह, मन, वाणी, पुण्य-पाप आदि पर हैं, उन्हें किसी भी हिसाब से अपना नहीं बनाया जा सकता। आचार्यों ने पुकार-पुकार कर आगम में सत्य का रहस्योद्घाटन किया है। इसमें समाज एक रहेगा या नहीं, इसकी परवाह नहीं की। व्यवहार के तरीके से व्यवहार है, उसका निषेध नहीं किया; पर उसे आदरने का निषेध किया है।

देहादि पदार्थ को आत्मा नहीं बनाया जा सकता या आत्मा के जैसा भी नहीं बनाया जा सकता। ऐसी ही वस्तुस्थिति है। फिर भी पर को 'अपना' मानता है, इससे अज्ञानी जीव को दु:ख ही होता है। यह स्वाभाविक है। पर को अपनाने से कभी सुख हो ही नहीं सकता। साक्षात् सर्वज्ञ को भी अपनाने से राग ही होता है, सुख नहीं होता; किन्तु सर्वज्ञ जैसा ही अपने स्वभाव को अपनाने से सुख और धर्म प्रकट होता है। ●

छहढाला शिविर सम्पन्न

मंगलायतन (अलीगढ़ - उ. प्र.) : यहाँ दिनांक 8 से 12 नवम्बर, 07 तक के.के.पी. पी.एस., उज्जैन एवं तीर्थधाम मंगलायतन के निर्देशन में भगवान महावीरस्वामी निर्वाण दिवस के प्रसंग पर छहढाला शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया।

शिविर में रत्नत्रय विधान का आयोजन श्री राजेन्द्रजी भान बरौलिया परिवार आगरावालों की ओर से हुआ। विधान के सम्पूर्ण कार्य ब्र. अभिनन्दनजी खनियाँधाना एवं पं. संजयजी जेवर के निर्देशन में सम्पन्न हुए।

शिविर में प्रतिदिन गुरुदेवश्री के छहढाला पर सी.डी. प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित ज्ञानचंदजी जैन सोनागिरि के पहली ढाल पर, पण्डित विमलचन्दजी झांझरी के दूसरी ढाल पर, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा के तीसरी ढाल पर, पण्डित राकेशजी शास्त्री के चौथी ढाल पर, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी के पाँचवी ढाल पर, पण्डित संजयकुमारजी जेवर के छठवी ढाल पर एवं पण्डित देवेन्द्रजी बिजौलिया के छहढाला सामान्य पर हुए प्रवचनों का लाभ मिला।

शिविर के दौरान रात्रि में छहढाला पर ही विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया। इसी अवसर पर 'मानमर्दन' नामक नाटक एवं संगीतमय अक्षयनिधि आदि अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित किये गये। शिविर में लगभग 800 साधर्मियों ने धर्मलाभ लिया। इस अवसर पर 25,000/- रुपये का सत्साहित्य घर-घर पहुँचा।

पाठकों के पत्र....

अल्पज्ञ भी समझ सकते हैं ...

आचार्य कुन्कुन्द विरचित ग्रंथराज समयसार पर डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा लिखित 'ज्ञायकभावप्रबोधिनी' टीका को पढ़कर **कांधला (उ.प्र.) से प्रवीणकुमारजी 'संवेगी'** लिखते हैं कि ह्न

''मैंने आपके द्वारा लिखित समयसार अनुशीलन एवं समयसार का सार आद्योपान्त पढ़ा है। स्वामीजी के प्रवचनरत्नाकर के सभी भाग भी पूरे मनोयोग से पढ़े हैं। समयसार नाटक, अध्यात्म तरंगिणी एवं पाण्डे राजमलजी की कलश टीका भी पढ़ी है; परन्तु जब मैंने आपके द्वारा लिखित ज्ञायकभाव प्रबोधिनी टीका पढ़ी, तो मेरा मन गदगद हो गया । इसके माध्यम से मुझ जैसे अल्पज्ञ भी समयसार जैसे ग्रंथाधिराज को समझ सकते हैं; इसका श्रेय आपको ही जाता है।

आपका साहित्य मैं बहुत रुचि से पढ़ता हूँ; जो भी पढ़ता हूँ, आद्योपान्त पढ़ता हूँ। मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि आपकी लेखनी जिनवाणी के प्रचार-प्रसार में चलती रहेगी और प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, अष्टपाहुड़ में भी जिनवाणी का सरलरूप हमारे समक्ष उपलब्ध होगा। आप जिनवाणी की अनवरत सेवा करते रहें ह्न इसी पावन भावना के साथ... ''

दीपावली पर व्याख्यानमाला

देवलाली (महा.) : यहाँ भगवान महावीरस्वामी के निर्वाण दिवस के अवसर पर दिनांक 6 नवम्बर से 10 नवम्बर, 07 तक श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट देवलाली द्वारा शिक्षण-शिविर एवं पंचकल्याणक विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रतिदिन प्रवचनसार की गाथा-93-94 पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। आपके अतिरिक्त पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, ब्र. हेमचन्दजी 'हेम', पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित अनिलकुमारजी शास्त्री भिण्ड के प्रवचनों का लाभ भी प्राप्त हुआ।

विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री ने सम्पन्न कराये। कार्यक्रम का आयोजन श्रीमती मंजुलाबेन चिमनलाल शाह परिवार हस्ते सुनीता-नितिनभाई शाह की ओर से किया गया।

शिविर के दौरान दिनांक 7 नवम्बर को **श्री मुकुन्दभाई खारा** का अभिनन्दन समारोह आयोजित किया गया, जिसके विस्तृत समाचार आगामी अंक में प्रकाशित किये जायेंगे।

तमिल भाषा में अनुवाद

कुन्दकुन्दादिक अनेक आचार्यों की साधनास्थली पावनभूमि तमिलनाडू में पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, मोक्षमार्गप्रकाशक एवं समयसार ग्रंथों का तमिल भाषा में अनुवाद कर 'अरूगन तत्तुवम्' नामक तमिल मासिक पत्रिका में प्रकाशन किया जा रहा है। जिससे तमिलनाडू में भी तत्त्व जिज्ञासुओं को तत्त्वलाभ मिल रहा है।

तमिल अनुवाद एवं प्रकाशित करने का कार्य श्री टोडरमल दि.जैन सि. महाविद्यालय, जयपुर के स्नातक डॉ.वि.धनकुमारजी जैन, श्री वी.सी. श्रीपालन, पण्डित जम्बूकुमारजी जैन एवं डॉ. उमापतिजी कर रहे हैं।

वैराग्य समाचार

रहली (म.प्र.) निवासी श्री रमेशचन्द जैन मलैया (खैरानेवाले) का दिनांक 12 नवम्बर, 07 को देहावसान हो गया है। आप अच्छे स्वाध्यायी एवं प्रवचनकार थे। जयपुर में लगनेवाले शिविरों में आपकी उपस्थिति बराबर बनी रहती थी। ज्ञातव्य है कि आपके सुपुत्र मनीष जैन भी टोडरमल महाविद्यालय के छात्र रह चुके हैं। आपकी स्मृति में आपके परिवार की ओर से वीतराग-विज्ञान एवं जैनपथप्रदर्शक दोनों पत्रिकाओं को कुल 401/- रुपये प्राप्त हुये हैं; एतदर्थ धन्यवाद !

दिवंगत आत्मा शीघ्र ही चतुर्गति के दु:खों से छूटकर निर्वाण प्राप्त करें ह्न यही भावना है।

जैन पत्र सम्पादक सम्मेलन सम्पन्न

मथुरा (उ.प्र.) : समाज सही दिशा में आगे बढ सके इसके लिये समाज के सजग प्रहरी समाचार पत्र तथा पत्रिकाओं का सशक्त एवं सबल होना आवयक है। यदि पत्र-पत्रिकाओं की दशा नहीं सुधरी तो समाज दिशा हीन हो जायेगा। यह निष्कर्ष दिगम्बर जैन संध चौरासी मथुरा के सभागार में सम्पन्न अखिल भारतीय जैन पत्र सम्पादक सम्मेलन में उभरा।

13 नवम्बर को आयोजित इस सम्मेलन का उद्घाटन प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाशजी जैन ने अपने उद्बोधन के माध्यम से किया। सम्मेलन में **जैन पत्रकारिता दशा और दिशा** पर विभिन्न सम्पादकों ने अपने विचार व्यक्त किये।

अपरान्ह पंजाब केसरी के डायरेक्टर श्री सुदेशभूषण जैन की अध्यक्षता में उपस्थित जैन पत्र सम्पादकों को सम्मानित किया गया। सम्मेलन में समाज के वरिष्ठ नेता श्री तारचन्द प्रेमी ने मंगलाचरण कर संघ की गौरवशाली परम्परा पर प्रकाश डाला। अन्य वक्ताओं में श्री स्वरूपचन्द जैन मारसन्स, डॉ. त्रिलोकचन्द कोठारी, श्री मदनलाल बैनाडा, श्री सतीश जैन ए.आई.आर, डॉ. राजेन्द्र बंसल, श्री रविन्द्र मालो, डॉ. पी.सी. रांवका, श्रीमती विमला जैन, श्री नरेन्द्रकुमार जैन, श्री सुरेशचन्द बारोलिया, श्री अनूपचन्द एडवोकेट आदि ने अपने विचार रखे।

सम्पादक संघ के संस्थापक एवं महामंत्री अखिल बंसल ने परिचर्चा की समीक्षा प्रस्तुत की।

ब्र. यशपालजी द्वारा धर्म प्रभावना

जबलपुर (म.प्र.) : यहाँ श्री महावीर दिगम्बर जैन मंदिर में मुमुक्षु मण्डल के विशेष आमंत्रण पर ब्र. यशपालजी जैन पधारे। दिनांक 1 नवम्बर से 15 नवम्बर तक आपके द्वारा प्रतिदिन प्रात: पंचलब्धि एवं सायंकाल मोक्षमार्ग की पूर्णता विषय पर मार्मिक कक्षा ली गई। जिसके माध्यम से समाज में अपूर्व धर्म प्रभावना हुई। इस अवसर पर वहाँ लगभग 20 लोगों ने कंठपाठ सुनाया तथा 10 बालक-बालिकाओं ने कथायें सुनाई। सभी को पुरस्कारित किया गया।

उदयपुर में धर्म प्रभावना

उदयपुर (राज.) : यहाँ दिगम्बर जैन मंदिर सिन्धी मार्केट में दिनांक 26 से 30 अक्टूबर तक मुम्बई से पधारी डॉ. शुद्धात्मप्रभाजी टड़ैया के प्रतिदिन प्रात: प्रवचनसार की गाथा 95 से 97 पर एवं सांयकाल नयचक्र पर सारगर्भित प्रवचन हुये। कार्यक्रम का आयोजन स्थानीय विद्वान पण्डित जिनेन्द्रजी शास्त्री के सहयोग से किया गया। ज्ञातव्य है कि आप उदयपुर में 'जैनदर्शन व विज्ञान' विषय पर आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में भाग लेने पधारीं थीं।

पाठशाला पुनर्जीवित

मुम्बई : डॉ. शुद्धात्मप्रभा टड़ैया के निर्देशन में बोरीवली (मुम्बई) में श्री कुणाल शाह एवं कु. मेघा शाह के विशेष प्रयत्नों से पाठशाला को पुनर्जीवित किया गया। अभी पाठशाला में 125 बच्चे तत्त्वलाभ ले रहे हैं। आने-जाने की सुविधा हेतु वहाँ पाठशाला- बस चलाई जा रही है।

श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल एवं
श्री दिगम्बर जिन चन्द्रप्रभ चैत्यालय, उदयपुर द्वारा आयोजित

श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान
युवा आध्यात्मिक शिक्षण शिविर एवं प्रवचन शृंखला
अखिल भा. जैन युवा फैडरेशन का अधिवेशन

(रविवार, 23 दिसम्बर से मंगलवार, 1 जनवरी, 2008 तक)

अत्यन्त हर्ष के साथ सूचित कर रहे हैं कि श्री दि. जैन मुमुक्षु मण्डल एवं श्री दिगम्बर जिन चन्द्रप्रभ चैत्यालय, उदयपुर के तत्त्वावधान में रविवार, दिनांक 23 दिसम्बर से सोमवार, दिनांक 1 जनवरी 2008 तक श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान, युवा आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर एवं अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन के राष्ट्रीय अधिवेशन का आयोजन अनेक मांगलिक कार्यक्रमों सहित किया जा रहा है।

इस अवसर पर अध्यात्मजगत के तार्किक विद्वान तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित सुनीलकुमारजी जैनापुरे राजकोट, पण्डित देवेन्द्रकुमारजी जैन मंगलायतन, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल मुम्बई, पण्डित विपिनजी शास्त्री मुम्बई आदि विद्वानों का मंगल सान्निध्य प्राप्त होगा।

इस मांगलिक प्रसंग पर आप सभी सादर आमन्त्रित हैं।

निवेदक

श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल, उदयपुर

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

9 से 12 दिसम्बर, 07	भोपाल	सिद्धचक्र मण्डल विधान
23 से 29 दिसम्बर, 07	उदयपुर	सिद्धचक्र विधान व फैडरेशन अधिवेशन
30 दिस. से 6 जनवरी, 08	चैन्नई	व्याख्यानमाला